International Journal of Social Science and Humanities
www.humanitiesjournals.com
Online ISSN: 2664-8628 Print ISSN: 2664-861X
Received: 30-08-2021, Accepted: 29-09-2021, Published: 14-10-2021
Volume 3, Issue 2, 2021, Page No. 90-92

नेताजी की यात्राओं के आलोक में भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन का इतिहास

अनुजा कटारा
सहायक आचार्य, इतिहास, माणिक्य लाल वर्मा राजकीय महाविद्यालय, भीलवाड़ा, राजस्थान भारत

सारांश
यह शोध–पत्र नेताजी सुभाष चंद्र बोस के जीवन की विभिन्न यात्राओं के माध्यम से भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के इतिहास का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अध्ययन में यह स्पष्ट किया गया है कि सुभाष चंद्र बोस की यात्राएँ केवल भौगोलिक गतिशीलता तक सीमित नहीं थीं, बल्कि वे भारत की स्वतंत्रता के लिए वैचारिक, राजनीतिक और सामरिक खोज का माध्यम भी थीं। बाल्यकाल से लेकर जीवन के अंतिम चरण तक उनकी देश–विदेश यात्राओं ने उनके व्यक्तित्व, राष्ट्रवादी दृष्टिकोण और क्रांतिकारी रणनीतियों को आकार दिया। यूरोप और एशिया की यात्राओं के दौरान उन्होंने अंतरराष्ट्रीय समर्थन प्राप्त करने, भारतीय युद्धबंदियों को संगठित करने तथा आज़ाद हिंद फौज के गठन जैसे महत्वपूर्ण कार्य किए। द्वितीय विश्व युद्ध की पृष्ठभूमि में धुरी राष्ट्रों के साथ उनके संबंधों और प्रयासों को भी इस अध्ययन में रेखांकित किया गया है। अंततः यह निष्कर्ष निकलता है कि नेताजी की यात्राएँ भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की जटिलता, वैश्विक आयाम और संघर्षशीलता को समझने का एक महत्वपूर्ण दृष्टिकोण प्रदान करती हैं।

मूल शब्द: सुभाष चंद्र बोस, भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन, आज़ाद हिंद फौज, द्वितीय विश्व युद्ध, विदेश यात्राएँ, धुरी राष्ट्र, राष्ट्रवाद, स्वतंत्रता संग्राम, अंतरराष्ट्रीय सहयोग, क्रांतिकारी रणनीति

सदियों से यात्राओं का एक लंबा इतिहास रहा है। मनुष्य ने ये यात्राएं अपने आरंभिक काल से ही अनेक प्रयोजनों से प्रारंभ की जिनमें भोजन की खोज, आवास की खोज, नए प्रदेशों की खोज, व्यापारिक मार्गों की खोज, धार्मिक स्थलों पर आध्यात्मिक शांति की खोज इत्यादि विभिन्न कारण प्रमुख रहे। ऐसी ही एक खोज भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में अपना अमूल्य योगदान देने वाले भारत माता के वीर सपूत नेताजी सुभाष चंद्र बोस ने भी जीवन पर्यंत की और वह थी भारत को आजादी दिलाने के मार्ग की खोज। इस खोज में न केवल उन्होंने संपूर्ण भारत की यात्रा की अपितु अन्य एशियाई तथा यूरोपीय देशों की यात्राएं भी जीवन भर करते रहे।

सुभाष का जन्म 23 जनवरी 1897 को कटक (उड़ीसा) के नामी वकील श्री जानकी नाथ बोस के साधन संपन्न परिवार में हुआ था। उनकी प्रारंभिक शिक्षा अपने जन्म स्थान पर ही हुई। नेताजी के जीवन में यात्राओं का दौर बाल्यकाल से ही प्रारंभ हो गया था। जब वह हाई स्कूल (कटक) में थे, तभी पास के जाजपुर गांव में भयंकर हैजे का प्रकोप हो गया। अपने अध्यापक श्री बाबू बेणीप्रसाद के साथ उन्होंने जाजपुर की यात्रा की व दो माह तक वहां सेवा–सुश्रूषा की तभी उन्हें आत्म संतोष की अनुभूति हुई। इनी निष्ठावान व देशभक्त अध्यापक बाबू बेणीप्रसाद से सुभाष ने राष्ट्र सेवा के गुण अर्जित किए। सुभाष स्वामी विवेकानंद के व्यक्तित्व व विचारों से भी अत्यंत प्रभावित थे। उन्होंने कहा, "जहां तक बंगाल का संबंध है स्वामी विवेकानंद आधुनिक राष्ट्रीय आंदोलन के आध्यात्मिक पिता थे।" स्वामी जी के कोलकाता में हुए भाषण को सुन सुभाष का हृदय भी सत्य की खोज हेतु बेचौन हो उठा। वह इसी सत्य की खोज के लिए कॉलेज के दिनों में ही वाराणसी व हरिद्वार की यात्रा पर निकल पड़े। दुर्लभ सिंह (द रिबेल प्रेसिडेंट) के अनुसार दूसरे बुध्द के समान उन्होंने अपना गृह त्याग दिया तथा अतीत के महान ऋषियों की तरह धार्मिक लक्ष्य की और बढ़े। जब गांधी एक बैरिस्टर के रूप में अपने भविष्य के निर्माण में संलग्न थे व जमनालाल बजाज धन संग्रह में व्यस्त थे, तब यह महान साधु आध्यात्मिक गुरु की खोज में अकेले यात्रारत था।"

सुभाष के पिता उन्हें आई.सी.एस. अफसर बनाना चाहते थे। इसीलिए उच्च अध्ययन के लिए सुभाष को इंग्लैंड भेजा गया, जहां उन्होंने आई.सी.एस. की परीक्षा अव्वल रहकर पास की किंतु उन्होंने सरकारी नौकरी करने से इंकार कर दिया। वे वर्ष 1921 में भारत लौटे। यह वह दौर था जब गांधी असहयोग आंदोलन के माध्यम से संपूर्ण देश को ब्रिटिश राज के विरुद्ध एकजुट करने में लगे थे। इसी वर्ष प्रिंस ऑफ वेल्स के स्वागत समारोह के बहिष्कार में सुभाष ने नेशनल वॉलिंटियर कोर के साथ भाग लिया। सुभाष को 5 दिसंबर 1921 को बंदी बना मास का कारावास का दंड दिया गया। यह सुभाष की प्रथम जेल यात्रा थी। गांधी के असहयोग आंदोलन में सी. आर. दास ने सुभाष को रचनात्मक कार्य में लगा दिया। यही सी. आर. दास उनके राजनीतिक गुरु भी माने जाते हैं। यहीं से कांग्रेस की राजनीतिक आंदोलन में उनका पदार्पण हुआ। सुभाष इसी दौरान नेशनल कॉलेज के प्राचार्य बने तथा 1923 में उन्होंने कोलकाता नगर निगम के चीफ एग्जीक्यूटिव ऑफिसर के रूप में कार्य किया।

सन 1924 में बंगाल ऑर्डिनेंस एक्ट के विरोधियों में वे भी अग्रणी थे। उन्हें फिर जेल में डाल दिया गया। कुछ समय के लिए अलीपुर जेल तथा बहरामपुर जेल में रखकर उन्हें मांडले जेल भेज दिया गया। सुभाष (द इंडियन स्ट्रगल) के शब्दों में, "मुझे स्मरण होता है कि यह वही स्थान है जहां तिलक ने 6 वर्ष व लाला लाजपत राय ने 1 वर्ष का समय बिताया था। इसलिए इस विचार ने हमें कुछ सांत्वना दी तथा हम उनका अनुकरण कर रहे हैं, इस विचार ने हममें गर्वानुभूति पैदा की।" सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौरान सुभाष पुनः जेल गए। क्षय रोग के पुराने मरीज होने के कारण उन्हें भुवाली सेनेटोरियम में रखा गया। यहां स्वास्थ्य में कुछ लाभ न मिलने पर 23 फरवरी 1932 को वे विदेश यात्रा पर गए। इस विदेश प्रवास में सुभाष ने पोलैंड, फ्रांस चेकोस्लोवाकिया, ऑस्ट्रिया तथा इटली इत्यादि यूरोपीय देशों का भ्रमण किया। इस यात्रा के दौरान सुभाष की मुसोलिनी से भेंट हुई। इस यात्रा के दौरान सुभाष ने अपनी पुस्तक द इंडियन स्ट्रगल की रचना की। वे जर्मनी की राजधानी बर्लिन गए तथा वहां डी. वेलरा से उनकी भेंट को ब्रिटिश सरकार ने गंभीरता से लिया। इसके पश्चात वे आयरलैंड गए और वहां से लंदन भी जाना चाहते थे परंतु ब्रिटिश सरकार ने इसकी अनुमति उन्हें नहीं दी। सुभाष भारत लौट आए। भारत लौटते ही 5 अप्रैल 1936 को उन्हें बंदी बना लिया गया। आक्रोशित जनता ने इसका विरोध किया व सुभाष मुक्ति दिवस मनाया गया। जनता के आक्रोश के कारण उन्हें कैद से मुक्त किया गया। स्वास्थ्य लाभ के लिए उन्हें

पुनः इंग्लैंड यात्रा पर जाना पड़ा परंतु 1938 के हरिपुरा कांग्रेस अधिवेशन में उन्हें अध्यक्ष चुना गया जिसकी अध्यक्षता के लिए उन्हें बीच में ही लौटना पड़ा।

1939 में त्रिपुरी संकट के कारण सुभाष ने कांग्रेस के अध्यक्ष पद से इस्तीफा दे दिया व फॉरवर्ड ब्लॉक की स्थापना की। मार्च 1940 में इस के नेतृत्व में रामगढ़ में ब्रिटिश साम्राज्य से समझौता विरोधी सभा का आयोजन किया। 3 जुलाई 1940 को कोलकाता से हॉलवैल स्मारक हटाने के लिए भी उन्होंने आंदोलन किया। भारतीय रक्षा अधिनियम की धारा 129 के तहत सरकार ने सुभाष को जुलाई 1940 में बंदी बना लिया। उन्होंने इस गिरफ्तारी के विरोधस्वरूप भूख हड़ताल करने का निश्चय किया तथा 29 नवंबर 1940 को सरकार को इसकी सूचना भी दी। यह सूचना मिलने पर उन्हें 5 दिसंबर 1940 को अस्वस्थता के कारण जेल से मुक्त कर कोलकाता में एल्गिन रोड स्थित उनके घर में नजरबंद कर दिया गया। उनके घर के बाहर पुलिस का कड़ा पहरा रखा गया था। पुलिस ने उन्हें अंतिम बार 16 जनवरी 1941 को वहां देखा।

सुभाष अपने भतीजे शिशिर कुमार बोस के साथ मिलकर किसी भी तरह भारत से बाहर जाने की योजना बना रहे थे। वे जियाउद्दीन नामक पठान के वेश में 17 जनवरी 1941 को रात 1:25 पर अपने घर से निकले। कोलकाता स्थित घर से निकलने के बाद 300 किलोमीटर की दूरी तय कर शिशिर व सुभाष धनबाद पहुंचे, जहां शिशिर के भाई अशोक से सपरिवार रहते थे। अगले दिन धनबाद से 50 किलोमीटर दूर एक छोटे से स्टेशन से सुभाष ने पेशावर के लिए ट्रेन पकड़ी। वहां वे मियां अकबर नामक पठान से मिले। पश्तो भाषा की जानकारी ना होने के कारण सुभाष ने एक गूंगे–बहरे पठान का भेष अपनाया। कुछ महीने पेशावर में रहने के बाद भगत राम (जिसने रहमत खान नाम से यात्रा की) व उनके रिश्तेदार के रूप में सुभाष (जियाउद्दीन नाम से यात्रा) सूफी स्थल की यात्रा के बहाने पेशावर से निकले। यहां से जमरूद गए व भारत की सीमा पार कर जलालाबाद के रास्ते 31 जनवरी 1941 को वे काबुल पहुंचे। (द ग्रेट एस्केप: शिशिर कुमार बोस; नेताजी रिसर्च ब्यूरो कोलकाता, 1975) सुभाष काबुल में जर्मन दूतावास में रुके तथा वहां उन्होंने ऑरलैंडो मौजेटा नाम के इटालियन पासपोर्ट पर यात्रा करने का निर्णय लिया। यह पासपोर्ट असली था जिस पर सिर्फ सुभाष का फोटो चिपकाया गया था। यहां से कुछ यूरोपियनों के साथ यात्रा करते हुए सड़क मार्ग से वे समरकंद (उज़्बेकिस्तान) पहुंचे। वहां से मास्को के लिए रेल से यात्रा की। 28 मार्च 1941 को सुबह विमान द्वारा मास्को से बर्लिन पहुंच गए। बोस की कोलकाता से बर्लिन की यह यात्रा ऐतिहासिक है। बर्लिन में सुभाष की हिटलर के विदेश मंत्री रिबनट्राप से भेंट हुई। बॉस ने रिबनट्राप के समक्ष कुछ प्रस्ताव रखें जिनमें बर्लिन रेडियो से ब्रिटिश विरोधी भाषण देने, जर्मनी में भारतीय युद्ध बंदियों से सैनिक दस्ते तैयार करने व धुरी शक्तियों द्वारा भारत की स्वतंत्रता की घोषणा करने संबंधी मांगे प्रमुख है। तीसरी शर्त के अतिरिक्त अन्य सभी प्रस्ताव जर्मनी और इटली की सरकार ने स्वीकार कर लिए। बर्लिन प्रवास के दौरान ही सुभाष ने रोम और पेरिस में स्वतंत्र भारत केंद्रों की स्थापना की और लगभग 3000 भारतीय सिपाही जिन्हें जर्मन सेनाओं ने बंदी बना लिया था, की एक सैनिक टुकड़ी तैयार की। इसी दौरान 1915 में भारत से जापान गए क्रांतिकारी रासबिहारी बोस भी जापान में भारतीय स्वतंत्रता के लिए प्रयासरत थे। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान दिसंबर 1941 में उत्तरी मलाया तथा फरवरी 1942 में सिंगापुर के पतन के बाद बड़ी संख्या में भारतीय युद्ध बंदी जापानी सेना को सौपे गए थे। ये जापानी सैनिक अधिकारी फूजीवारा के अधीन थे। फुजिवारा की सहायता से कैप्टन मोहन सिंह ने भारतीय युद्ध बंदी सैनिकों को शामिल कर आजाद हिंद फौज (आई एन ए) का निर्माण किया। अगस्त 1942 तक इसमें 40000 युद्ध बंदी शामिल हो गए। बैंकॉक सम्मेलन में 1 सितंबर 1942 को आजाद हिंद फौज की विधिवत स्थापना हुई। इसी सम्मेलन में सुभाष को आमंत्रित करने का निर्णय भी लिया गया।

सुभाष की पूर्वी एशिया की यात्रा: अपने सहयोगी आबिद हुसैन के साथ सुभाष 8 फरवरी 1943 को जर्मनी से सुदूर पूर्व की ओर चल पड़े। उन्होंने जर्मन व जापानी पनडुब्बियों में समुद्र मार्ग से यात्रा की और वे सुमात्रा पहुंचे। वहां से जापानी सैनिक अधिकारी यामामोटो के साथ हवाई जहाज से टोक्यो गए। टोक्यो में जापानी प्रधानमंत्री तोजो समेत अनेक मंत्रियों, सैन्य अधिकारियों से उन्होंने भेंट की। बॉस ने इसी दौरान टोक्यो रेडियो से प्रतिदिन भाषण देना शुरू किया। इन प्रसारणों में सुभाष ने भारत की स्वतंत्रता के लिए सशस्त्र संघर्ष की अनिवार्यता पर बल दिया। 2 जुलाई 1943 को सुभाष चंद्र बोस टोक्यो से सिंगापुर गए। वहां 4 जुलाई 1943 को रासबिहारी बोस ने सिंगापुर के कैथे थिएटर में सार्वजनिक सभा में इंडियन इंडिपेंडेंस लीग की अध्यक्षता भी बॉस को सौंप दी। वही अपने भाषण में सुभाष ने स्वतंत्र भारत की अंतरिम सरकार बनाने का विचार व्यक्त किया। इन्होंने आजाद हिंद फौज को षदिल्ली चलोष का नारा दिया। आई एन ए में सुभाष ने रानी झांसी नाम से स्त्री रेजिमेंट भी बनाई और कैप्टन लक्ष्मी स्वामीनाथन को इसका नेतृत्व सौंपा। 1945 ई. में आजाद हिंद फौज में सैनिकों की संख्या 40000 हो गई थी। इन सैनिकों के प्रशिक्षण के लिए मलाया और बर्मा में भी केंद्र खोले गए। सुभाष ने 21 अक्टूबर 1943 को भारत की अंतरिम सरकार की घोषणा की। सुभाष स्वयं इस सरकार के अध्यक्ष, प्रधानमंत्री और सर्वोच्च सेनापति थे। 30 अक्टूबर को जापानी सरकार ने इस अंतरिम सरकार को मान्यता दे दी और अगले दिन 24 अक्टूबर 1943 को आई एन ए ने ब्रिटेन और अमेरिका के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। अपने सिंगापुर प्रवास के दौरान सुभाष ने वहां के रामकृष्ण मिशन से भी संपर्क स्थापित कर लिया और समय–समय पर वहां जाते रहे। 5 और 6 नवंबर 1943 को जापान द्वारा टोक्यो में आयोजित वृहत्तर पूर्वी एशिया सम्मेलन में भाग लेने के लिए सुभाष टोक्यो गए। यहां यह निर्णय लिया गया कि जापान के नियंत्रण वाली भारत की भूमि आजाद हिंद सरकार को सौंपी जाए। फलस्वरूप अंडमान और निकोबार द्वीप प्राप्त हुए, जिन पर जापान का अधिकार था। सुभाष ने इन्हें क्रमश शहीद और स्वराज द्वीप कहा। आजाद हिंद फौज में गांधी, आजाद और नेहरू ब्रिगेड का निर्माण किया गया। इन तीनों ब्रिगेड के चुने हुए सिपाहियों को लेकर सुभाष ब्रिगेड का निर्माण किया गया। कैप्टन शाहनवाज खां को इस ब्रिगेड का सेनापति नियुक्त किया गया।

जापानी सेना के साथ आजाद हिंद फौज ने पूर्वी भारत पर आक्रमण कर दिया और 19 मार्च 1944 को भारत–बर्मा सीमा पर भारत भूमि पर तिरंगा झंडा लहराया। 1944 की सर्दियों में अंग्रेजों ने प्रति–आक्रमण प्रारंभ कर दिया और मई 1945 में रंगून पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया। जापान और आजाद हिंद फौज के सिपाहियों को बंदी बना लिया गया 1944 के उत्तरार्ध में व 1945 के प्रारंभ में जापान और आजाद हिंद फौज बर्मा, मलाया व सिंगापुर से पीछे हटने लगी। अक्टूबर 1944 में जापानी प्रधानमंत्री तोजो अपदस्थ हो गए और नई जापान सरकार बोस व आजाद हिंद फौज के साथ सहयोग करने को तत्पर नहीं थी। बोस आइ एन ए के लिए सहायता प्राप्त करने के उद्देश्य से जापान गए लेकिन उन्हें निराशा ही हाथ लगी। बोस ने टोक्यो में सोवियत राजपूत से संपर्क करने का भी प्रयास किया लेकिन असफल रहे। बोस शंघाई के रास्ते वर्मा लौट आए और मई 1945 में आजाद हिंद फौज ने अंग्रेजी सेना के समक्ष आत्मसमर्पण कर दिया। द्वितीय विश्व युद्ध में जापान के आत्मसमर्पण के बाद बोस

सोवियत संघ की सहायता प्राप्त करना चाहते थे इसीलिए उन्होंने सोवियत सीमा की ओर जाने के लिए बैंकाक से उड़ान भरी। मार्ग में उनका विमान फारमोसा (ताइवान) रुका और 18 अगस्त 1945 को फारमोसा से सोवियत सीमा के लिए उनके विमान ने उड़ान भरने के कुछ समय पश्चात ही आग पकड़ ली और इस विमान दुर्घटना में सुभाष शहीद हो गए। सुभाष की मृत्यु के संबंध में अनेक अफवाहें फैली, इसीलिए सुभाष की मृत्यु की पहेली को सुलझाने के लिए 1956 में शाहनवाज समिति और 1970–74 में पंजाब उच्च न्यायालय के अवकाश प्राप्त न्यायाधीश जी.डी. खोसला की एक सदस्यीय समिति का गठन किया गया। उक्त समितियां इसी निष्कर्ष पर पहुंची कि नेताजी की विमान दुर्घटना में मृत्यु हो गई थी। सुभाष द्वारा अपने जीवन का उत्तरार्ध भारत की स्वतंत्रता के अंतिम उपाय के तौर पर विदेशी शक्तियों की सहायता प्राप्त करने के प्रयास में गुजरा। विशेषकर धुरी राष्ट्रों जिनमें इटली, जापान और जर्मनी शामिल थे। इस समय धुरी राष्ट्र ब्रिटेन सहित मित्र राष्ट्रों के खिलाफ द्वितीय विश्व युद्ध में संलग्न थे। सुभाष को यह भारत की आजादी का अभूतपूर्व अवसर नजर आया। वे चाहते थे कि इन धुरी राष्ट्रों की सहायता से द्वितीय विश्व युद्ध में उलझे ब्रिटेन के हालात का फायदा उठाना चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वे अनेकों यूरोप और एशियाई देशों की यात्रा पर रहे। यद्यपि वे स्वतंत्र भारत के स्वप्न को साकार होते हुए देखने के लिए ना रहे किंतु उनका संघर्ष राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन की इस जटिल यात्रा का एक अहम पड़ाव था। सुभाष वह सितारा था जो भारत के नभ पटल पर अवतरित हुआ, संपूर्ण जीवन भर यात्रारत रहते हुए फारमोसा के आकाश में अस्त हो गया किंतु भारत से फारमोसा तक की अनेक पड़ावों से गुजरी हुई यह यात्रा संपूर्ण भारत वासियों के लिए प्रेरणा स्रोत बनकर उभरी।

संदर्भ

1. सुभाष चंद्र बोस: व्यक्ति और विचार; विश्व प्रकाश गुप्ता मोहिनी गुप्ता ; राधा पब्लिकेशंस नई दिल्ली वर्ष 1997 ई.
2. द इंडियन स्ट्रगल; सुभाष चंद्र बोस; Lawrence and Wishart Co. Publications, London
3. द रिबेल प्रेसिडेंट; दुर्लभ सिंह; हीरो पब्लिकेशंस, लाहौर
4. द ग्रेट एस्केप: शिशिर कुमार बोस; नेताजी रिसर्च ब्यूरो, कोलकाता, 1975
5. द तलवार्स ऑफ पठान एंड सुभाष चंद्र्स ग्रेट एस्केप; भगतराम तलवार, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1976
6. क्रांति का देवता: सुभाष चंद्र बोस; अनंत, अशफाक अहमद
7. आधुनिक भारत का इतिहास; बिपिन चंद्र; ओरियंट ब्लैकस्वान पब्लिकेशंस, दिल्ली
8. आधुनिक भारत का इतिहास; आर. एल. शुक्ल